www.rajteachers.com

स्वामी विवेकानन्द

स्वामी विवेकानन्द वेदान्त के विख्यात और प्रभावशाली आध्यात्मिक गुरु थे। उनका वास्तविक नाम नरेन्द्र नाथ दत्त था। उन्होंने अमेरिका स्थित शिकागो में सन् 1893 में आयोजित विश्व धर्म महासभा में भारत की ओर से सनातन धर्म का प्रतिनिधित्व किया था। भारत का आध्यात्मिकता से परिपूर्ण वेदान्त दर्शन अमेरिका और यूरोप के हर एक देश में स्वामी विवेकानन्द की वक्तृता के कारण ही पहुँचा। उन्होंने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की थी जो आज भी अपना काम कर रहा है। वे रामकृष्ण परमहंस के सुयोग्य शिष्य थे। उन्हें प्रमुख रूप से उनके भाषण की शुरुआत "मेरे अमरीकी भाइयो एवं बहनों" के साथ करने के लिये जाना जाता है। उनके संबोधन के इस प्रथम वाक्य ने सबका दिल जीत लिया था।

कलकत्ता के एक कुलीन बंगाली परिवार में जन्मे, विवेकानंद आध्यात्मिकता की ओर झुके हुए थे। वे अपने गुरु रामकृष्ण देव से काफी प्रभावित थे जिनसे उन्होंने सीखा कि सारे जीव स्वयं परमात्मा का ही एक अवतार हैं; इसलिए मानव जाति की सेवा द्वारा परमात्मा की भी सेवा की जा सकती है। रामकृष्ण की मृत्यु के बाद विवेकानंद ने बड़े पैमाने पर भारतीय उपमहाद्वीप का दौरा किया और ब्रिटिश भारत में मौजूदा स्थितियों का पहले हाथ ज्ञान हासिल किया। बाद में विश्व धर्म संसद 1893 में भारत का प्रतिनिधित्व करने, संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए कूच की। विवेकानंद के संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैंड और यूरोप में हिंदू दर्शन के सिद्धांतों का प्रसार किया , सैकड़ों सार्वजनिक और निजी व्याख्यानों का आयोजन किया। भारत में, विवेकानंद को एक देशभक्त संत के रूप में माना जाता है और इनके जन्मदिन को राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में मनाया जाता है।

गौड़ मोहन मुखर्जी स्ट्रीट कोलकाता स्थित स्वामी विवेकानन्द का मूल जन्मस्थान जिसका पुनरुद्धार करके अब सांस्कृतिक केन्द्र का रूप दे दिया गया है

स्वामी विवेकानन्द

स्वामी विवेकानन्द शिकागो (1893) में

चित्र में स्वामी विवेकानन्द ने बाँग्ला एवं अंग्रेज़ी भाषा में लिखा है: "एक असीमित, पवित्र, शुद्ध सोच एवं गुणों से परिपूर्ण उस परमात्मा को मैं नतमस्तक हूँ।" इसी चित्र में दूसरी ओर स्वामी विवेकानन्द के हस्ताक्षर हैं।

जन्म	नरेंद्रनाथ दत्त 12 जनवरी 1863 कलकत्ता (अब कोलकाता)
मृत्यु	4 जुलाई 1902 (उम्र 39) बेलूर मठ, बंगाल रियासत, ब्रिटिश राज (अब बेलूर, पश्चिम बंगाल में)
गुरु/शिक्षक	श्री रामकृष्ण परमहंस
दर्शन	आधुनिक वेदांत, राज योग
साहित्यिक कार्य	*राज योग, कर्म योग, भक्ति योग, ज्ञान योग, माई मास्टर*
कथन	**"उठो, जागो और तब तक नहीं रुको जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाये"**
हस्ताक्षर	

www.rajteachers.com

स्वामी विवेकानन्द का जन्म 12 जनवरी सन् 1863 (विद्वानों के अनुसार मकर संक्रान्ति संवत् १९२०) को कलकत्ता में एक कायस्थ परिवार में हुआ था। उनके बचपन का नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। पिता विश्वनाथ दत्त कलकत्ता हाईकोर्ट के एक प्रसिद्ध वकील थे। दुर्गाचरण दत्ता, (नरेंद्र के दादा) संस्कृत और फारसी के विद्वान थे उन्होंने अपने परिवार को 25 की उम्र में छोड़ दिया और एक साधु बन गए। उनकी माता भुवनेश्वरी देवी धार्मिक विचारों की महिला थीं। उनका अधिकांश समय भगवान शिव की पूजा-अर्चना में व्यतीत होता था। नरेंद्र के पिता और उनकी माँ के धार्मिक, प्रगतिशील व तर्कसंगत रवैया ने उनकी सोच और व्यक्तित्व को आकार देने में मदद की।

माँ भुवनेश्वरी देवी (1841-1911) का एक चित्र

बचपन से ही नरेन्द्र अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि के तो थे ही नटखट भी थे। अपने साथी बच्चों के साथ वे खूब शरारत करते और मौका मिलने पर अपने अध्यापकों के साथ भी शरारत करने से नहीं चूकते थे। उनके घर में नियमपूर्वक रोज पूजा-पाठ होता था धार्मिक प्रवृत्ति की होने के कारण माता भुवनेश्वरी देवी को पुराण,रामायण, महाभारत आदि की कथा सुनने का बहुत शौक था। कथावाचक बराबर इनके घर आते रहते थे। नियमित रूप से भजन-कीर्तन भी होता रहता था। परिवार के धार्मिक एवं आध्यात्मिक वातावरण के प्रभाव से बालक नरेन्द्र के मन में बचपन से ही धर्म एवं अध्यात्म के संस्कार गहरे होते गये। माता-पिता के संस्कारों और धार्मिक वातावरण के कारण बालक के मन में बचपन से ही ईश्वर को जानने और उसे प्राप्त करने की लालसा दिखायी देने लगी थी। ईश्वर के बारे में जानने की उत्सुकता में कभी-कभी वे ऐसे प्रश्न पूछ बैठते थे कि इनके माता-पिता और कथावाचक पण्डितजी तक चक्कर में पड़ जाते थे।

शिक्षा

सन् 1871 में, आठ साल की उम्र में, नरेंद्रनाथ ने ईश्वर चंद्र विद्यासागर के मेट्रोपोलिटन संस्थान में दाखिला लिया जहाँ वे स्कूल गए। 1877 में उनका परिवार रायपुर चला गया। 1879 में, कलकत्ता में अपने परिवार की वापसी के बाद, वह एकमात्र छात्र थे जिन्होंने प्रेसीडेंसी कॉलेज प्रवेश परीक्षा में प्रथम डिवीजन अंक प्राप्त किये।
वे दर्शन, धर्म, इतिहास, सामाजिक विज्ञान, कला और साहित्य सहित विषयों के एक उत्साही पाठक थे। इनकी वेद, उपनिषद, भगवद् गीता, रामायण, महाभारत और पुराणों के अतिरिक्त अनेक हिन्दू शास्त्रों में गहन रूचि थी। नरेंद्र को भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्रशिक्षित किया गया था, और ये नियमित रूप से शारीरिक व्यायाम में व खेलों में भाग लिया करते थे। नरेंद्र ने पश्चिमी तर्क, पश्चिमी दर्शन और यूरोपीय इतिहास का अध्ययन जनरल असेंबली इंस्टिट्यूशन (अब स्कॉटिश चर्च कॉलेज) में किया। 1881 में इन्होंने ललित कला की परीक्षा उत्तीर्ण की, और 1884 में कला स्नातक की डिग्री पूरी कर ली।
नरेंद्र ने डेविड ह्यूम, इमैनुएल कांट, जोहान गोटलिब फिच, बारूक स्पिनोज़ा, जोर्ज डब्लू एच हेजेल, आर्थर स्कूपइन्हार , ऑगस्ट कॉम्टे, जॉन स्टुअर्ट मिल और चार्ल्स डार्विन के कामों का अध्यन किया। उन्होंने स्पेंसर की किताब एजुकेशन (1861) का बंगाली में अनुवाद किया। ये हर्बर्ट स्पेंसर के विकासवाद से काफी मोहित थे। पश्चिम दार्शनिकों के अध्यन के साथ ही इन्होंने संस्कृत ग्रंथों और बंगाली साहित्य को भी सीखा। विलियम हेस्टी (महासभा संस्था के प्रिंसिपल) ने लिखा, "नरेंद्र वास्तव में एक जीनियस है। मैंने काफी विस्तृत और बड़े इलाकों में यात्रा की है लेकिन उनकी जैसी प्रतिभा वाला का एक भी बालक कहीं नहीं देखा यहाँ तक की जर्मन विश्वविद्यालयों के दार्शनिक छात्रों में भी नहीं।" अनेक बार इन्हें श्रुतिधर(विलक्षण स्मृति वाला एक व्यक्ति) भी कहा गया है।

आध्यात्मिक शिक्षुता - ब्रह्म समाज का प्रभाव

1880 में नरेंद्र, ईसाई से हिन्दू धर्म में रामकृष्ण के प्रभाव से परिवर्तित केशव चंद्र सेन की नव विधान में शामिल हुए, नरेंद्र 1884 से पहले कुछ बिंदु पर, एक फ्री मसोनरी लॉज और साधारण ब्रह्म समाज जो ब्रह्म समाज का ही एक

www.rajteachers.com

अलग गुट था और जो केशव चंद्र सेन और देवेंद्रनाथ टैगोर के नेतृत्व में था। 1881-1884 के दौरान ये सेन्स बैंड ऑफ़ होप में भी सक्रीय रहे जो धूम्रपान और शराब पीने से युवाओं को हतोत्साहित करता था।
यह नरेंद्र के परिवेश के कारण पश्चिमी आध्यात्मिकता के साथ परिचित हो गया था। उनके प्रारंभिक विश्वासों को ब्रह्म समाज ने जो एक निराकार ईश्वर में विश्वास और मूर्ति पूजा का प्रतिवाद करता था, ने प्रभावित किया और सुव्यवस्थित, युक्तिसंगत, अद्वैतवादी अवधारणाओं , धर्मशास्त्र ,वेदांत और उपनिषदों के एक चयनात्मक और आधुनिक ढंग से अध्यन पर प्रोत्साहित किया।

निष्ठा

एक बार किसी शिष्य ने गुरुदेव की सेवा में घृणा और निष्क्रियता दिखाते हुए नाक-भौं सिकोड़ीं। यह देखकर विवेकानन्द को क्रोध आ गया। वे अपने उस गुरु भाई को सेवा का पाठ पढ़ाते और गुरुदेव की प्रत्येक वस्तु के प्रति प्रेम दर्शाते हुए उनके बिस्तर के पास रक्त, कफ आदि से भरी थूकदानी उठाकर फेंकते थे। गुरु के प्रति ऐसी अनन्य भक्ति और निष्ठा के प्रताप से ही वे अपने गुरु के शरीर और उनके दिव्यतम आदर्शों की उत्तम सेवा कर सके। गुरुदेव को समझ सके और स्वयं के अस्तित्व को गुरुदेव के स्वरूप में विलीन कर सके। और आगे चलकर समग्र विश्व में भारत के अमूल्य आध्यात्मिक भण्डार की महक फैला सके। ऐसी थी उनके इस महान व्यक्तित्व की नींव में गुरुभक्ति, गुरुसेवा और गुरु के प्रति अनन्य निष्ठा जिसका परिणाम सारे संसार ने देखा। स्वामी विवेकानन्द अपना जीवन अपने गुरुदेव रामकृष्ण परमहंस को समर्पित कर चुके थे। उनके गुरुदेव का शरीर अत्यन्त रुग्ण हो गया था। गुरुदेव के शरीर-त्याग के दिनों में अपने घर और कुटुम्ब की नाजुक हालत व स्वयं के भोजन की चिन्ता किये बिना वे गुरु की सेवा में सतत संलग्न रहे।
विवेकानन्द बड़े स्वप्नदृष्टा थे। उन्होंने एक ऐसे समाज की कल्पना की थी जिसमें धर्म या जाति के आधार पर मनुष्य-मनुष्य में कोई भेद न रहे। उन्होंने वेदान्त के सिद्धान्तों को इसी रूप में रखा। अध्यात्मवाद बनाम भौतिकवाद के विवाद में पड़े बिना भी यह कहा जा सकता है कि समता के सिद्धान्त का जो आधार विवेकानन्द ने दिया उससे सबल बौद्धिक आधार शायद ही ढूँढा जा सके। विवेकानन्द को युवकों से बड़ी आशाएँ थीं। आज के युवकों के लिये इस ओजस्वी सन्यासी का जीवन एक आदर्श है। उनके नाना जी का नाम श्री नंदलाल बसु था।

यात्राएँ

२५ वर्ष की अवस्था में नरेन्द्र ने गेरुआ वस्त्र धारण कर लिए थे। तत्पश्चात उन्होंने पैदल ही पूरे भारतवर्ष की यात्रा की। सन् १८९३ में शिकागो (अमरीका) में विश्व धर्म परिषद् हो रही थी। स्वामी विवेकानन्द उसमें भारत के प्रतिनिधि के रूप में पहुँचे। योरोप-अमरीका के लोग उस समय पराधीन भारतवासियों को बहुत हीन दृष्टि से देखते थे।

स्वामी विवेकानन्द शिकागो के विश्व धर्म परिषद में बैठे हुए

वहाँ लोगों ने बहुत प्रयत्न किया कि स्वामी विवेकानन्द को सर्वधर्म परिषद् में बोलने का समय ही न मिले। परन्तु एक अमेरिकन प्रोफेसर के प्रयास से उन्हें थोड़ा समय मिला। उस परिषद् में उनके विचार सुनकर सभी विद्वान चकित हो गये। फिर तो अमरीका में उनका अत्यधिक स्वागत हुआ। वहाँ उनके भक्तों का एक बड़ा समुदाय बन गया। तीन वर्ष वे अमरीका में रहे और वहाँ के लोगों को भारतीय तत्वज्ञान की अद्भुत ज्योति प्रदान की। उनकी वक्तृत्व-शैली तथा ज्ञान को देखते हुए वहाँ के मीडिया ने उन्हें **साइक्लॉनिक हिन्दू** का नाम दिया।

"अध्यात्म-विद्या और भारतीय दर्शन के बिना विश्व अनाथ हो जायेगा" यह स्वामी विवेकानन्द का दृढ़ विश्वास था। अमरीका में उन्होंने रामकृष्ण मिशन की अनेक शाखाएँ स्थापित कीं। अनेक अमरीकी विद्वानों ने उनका शिष्यत्व ग्रहण किया। वे सदा अपने को 'गरीबों का सेवक' कहते थे। भारत के गौरव को देश-देशान्तरों में उज्ज्वल करने का उन्होंने सदा प्रयत्न किया।

www.rajteachers.com

विवेकानन्द का योगदान तथा महत्व

मुम्बई में गेटवे ऑफ़ इन्डिया के निकट स्थित स्वामी विवेकानन्द की प्रतिमर्ति

उन्तालीस वर्ष के संक्षिप्त जीवनकाल में स्वामी विवेकानन्द जो काम कर गये वे आने वाली अनेक शताब्दियों तक पीढ़ियों का मार्गदर्शन करते रहेंगे।

तीस वर्ष की आयु में स्वामी विवेकानन्द ने शिकागो, अमेरिका के विश्व धर्म सम्मेलन में हिंदू धर्म का प्रतिनिधित्व किया और उसे सार्वभौमिक पहचान दिलवायी। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने एक बार कहा था-"यदि आप भारत को जानना चाहते हैं तो विवेकानन्द को पढ़िये। उनमें आप सब कुछ सकारात्मक ही पायेंगे, नकारात्मक कुछ भी नहीं।"

रोमां रोलां ने उनके बारे में कहा था-"उनके द्वितीय होने की कल्पना करना भी असम्भव है, वे जहाँ भी गये, सर्वप्रथम ही रहे। हर कोई उनमें अपने नेता का दिग्दर्शन करता था। वे ईश्वर के प्रतिनिधि थे और सब पर प्रभुत्व प्राप्त कर लेना ही उनकी विशिष्टता थी। हिमालय प्रदेश में एक बार एक अनजान यात्री उन्हें देख ठिठक कर रुक गया और आश्चर्यपूर्वक चिल्ला उठा-'शिव!' यह ऐसा हुआ मानो उस व्यक्ति के आराध्य देव ने अपना नाम उनके माथे पर लिख दिया हो।"

वे केवल सन्त ही नहीं, एक महान देशभक्त, वक्ता, विचारक, लेखक और मानव-प्रेमी भी थे। अमेरिका से लौटकर उन्होंने देशवासियों का आह्वान करते हुए कहा था-"नया भारत निकल पड़े मोची की दुकान से, भड़भूँजे के भाड़ से, कारखाने से, हाट से, बाजार से; निकल पडे झाड़ियों, जंगलों, पहाड़ों, पर्वतों से।" और जनता ने स्वामीजी की पुकार का उत्तर दिया। वह गर्व के साथ निकल पड़ी। गान्धीजी को आजादी की लड़ाई में जो जन-समर्थन मिला, वह विवेकानन्द के आह्वान का ही फल था। इस प्रकार वे भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के भी एक प्रमुख प्रेरणा-स्रोत बने। उनका विश्वास था कि पवित्र भारतवर्ष धर्म एवं दर्शन की पुण्यभूमि है। यहीं बड़े-बड़े महात्माओं व ऋषियों का जन्म हुआ, यही संन्यास एवं त्याग की भूमि है तथा यहीं-केवल यहीं-आदिकाल से लेकर आज तक मनुष्य के लिये जीवन के सर्वोच्च आदर्श एवं मुक्ति का द्वार खुला हुआ है। उनके कथन-"'उठो, जागो, स्वयं जागकर औरों को जगाओ। अपने नर-जन्म को सफल करो और तब तक नहीं रुको जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाये।"

उन्नीसवी सदी के अन्तिम वर्षों में लिया गया क्रान्तिकारी वेशधारी विवेकानन्द का एक दुर्लभ चित्र। यह चित्र देखकर उन्होंने कहा था-"यह चित्र तो डाकुओं के किसी सरदार जैसा लगता है।"

उन्नीसवीं सदी के आखिरी वर्षों में विवेकानन्द लगभग सशस्त्र या हिंसक क्रान्ति के जरिये भी देश को आजाद करना चाहते थे। परन्तु उन्हें जल्द ही यह विश्वास हो गया था कि परिस्थितियाँ उन इरादों के लिये अभी परिपक्व नहीं हैं। इसके बाद ही विवेकानन्द ने 'एकला चलो' की नीति का पालन करते हुए एक परिव्राजक के रूप में भारत और दुनिया को खंगाल डाला।

उन्होंने कहा था कि मुझे बहुत से युवा संन्यासी चाहिये जो भारत के ग्रामों में फैलकर देशवासियों की सेवा में खप जायें। उनका यह सपना पूरा नहीं हुआ। विवेकानन्द पुरोहितवाद, धार्मिक आडम्बरों, कठमुल्लापन और रूढ़ियों के सख्त खिलाफ थे। उन्होंने धर्म को मनुष्य की सेवा के केन्द्र में रखकर ही आध्यात्मिक चिंतन किया था। उनका हिन्दू धर्म अटपटा, लिजलिजा और वायवीय नहीं था। उन्होंने यह विद्रोही बयान दिया था कि इस देश के तैंतीस करोड़ भूखे, दरिद्र और कुपोषण के शिकार लोगों को देवी देवताओं की तरह मन्दिरों में स्थापित कर दिया जाये और मन्दिरों से देवी देवताओं की मूर्तियों को हटा दिया जाये।

उनका यह कालजयी आह्वान इक्कीसवीं सदी के पहले दशक के अन्त में एक बड़ा प्रश्नवाचक चिन्ह खड़ा करता है। उनके इस आह्वान को सुनकर पूरे पुरोहित वर्ग की घिग्घी बँध गई थी। आज कोई दूसरा साधु तो क्या सरकारी मशीनरी भी किसी अवैध मन्दिर की मूर्ति को हटाने का जोखिम नहीं उठा सकती।

www.rajteachers.com

विवेकानन्द के जीवन की अन्तर्लय यही थी कि वे इस बात से आश्वस्त थे कि धरती की गोद में यदि ऐसा कोई देश है जिसने मनुष्य की हर तरह की बेहतरी के लिए ईमानदार कोशिशें की हैं, तो वह भारत ही है। उन्होंने पुरोहितवाद, ब्राह्मणवाद, धार्मिक कर्मकाण्ड और रूढ़ियों की खिल्ली भी उड़ायी और लगभग आक्रमणकारी भाषा में ऐसी विसंगतियों के खिलाफ युद्ध भी किया। उनकी दृष्टि में हिन्दू धर्म के सर्वश्रेष्ठ चिन्तकों के विचारों का निचोड़ पूरी दुनिया के लिए अब भी ईर्ष्या का विषय है। स्वामीजी ने संकेत दिया था कि विदेशों में भौतिक समृद्धि तो है और उसकी भारत को जरूरत भी है लेकिन हमें याचक नहीं बनना चाहिये। हमारे पास उससे ज्यादा बहुत कुछ है जो हम पश्चिम को दे सकते हैं और पश्चिम को उसकी बेसाख्ता जरूरत है।

यह स्वामी विवेकानन्द का अपने देश की धरोहर के लिये दम्भ या बड़बोलापन नहीं था। यह एक वेदान्ती साधु की भारतीय सभ्यता और संस्कृति की तटस्थ, वस्तुपरक और मूल्यगत आलोचना थी। बीसवीं सदी के इतिहास ने बाद में उसी पर मुहर लगायी।

मृत्यु

वेलूर मठ स्थित स्वामी विवेकानन्द मन्दिर

विवेकानंद ओजस्वी और सारगर्भित व्याख्यानों की प्रसिद्धि विश्व भर में है। जीवन के अन्तिम दिन उन्होंने शुक्ल यजुर्वेद की व्याख्या की और कहा-"एक और विवेकानन्द चाहिये, यह समझने के लिये कि इस विवेकानन्द ने अब तक क्या किया है।" उनके शिष्यों के अनुसार जीवन के अन्तिम दिन 4 जुलाई 1902 को भी उन्होंने अपनी ध्यान करने की दिनचर्या को नहीं बदला और प्रात: दो तीन घण्टे ध्यान किया और ध्यानावस्था में ही अपने ब्रह्मरन्ध्र को भेदकर महासमाधि ले ली। बेलूर में गंगा तट पर चन्दन की चिता पर उनकी अंत्येष्टि की गयी। इसी गंगा तट के दूसरी ओर उनके गुरु रामकृष्ण परमहंस का सोलह वर्ष पूर्व अन्तिम संस्कार हुआ था।

उनके शिष्यों और अनुयायियों ने उनकी स्मृति में वहाँ एक मन्दिर बनवाया और समूचे विश्व में विवेकानन्द तथा उनके गुरु रामकृष्ण के सन्देशों के प्रचार के लिये 130 से अधिक केन्द्रों की स्थापना की।

विवेकानन्द का शिक्षा-दर्शन

स्वामी विवेकानन्द मैकाले द्वारा प्रतिपादित और उस समय प्रचलित अंग्रेजी शिक्षा व्यवस्था के विरोधी थे, क्योंकि इस शिक्षा का उद्देश्य सिर्फ बाबुओं की संख्या बढ़ाना था। वह ऐसी शिक्षा चाहते थे जिससे बालक का सर्वांगीण विकास हो सके। बालक की शिक्षा का उद्देश्य उसको आत्मनिर्भर बनाकर अपने पैरों पर खड़ा करना है। स्वामी विवेकानन्द ने प्रचलित शिक्षा को 'निषेधात्मक शिक्षा' की संज्ञा देते हुए कहा है कि आप उस व्यक्ति को शिक्षित मानते हैं जिसने कुछ परीक्षाएं उत्तीर्ण कर ली हों तथा जो अच्छे भाषण दे सकता हो, पर वास्तविकता यह है कि जो शिक्षा जनसाधारण को जीवन संघर्ष के लिए तैयार नहीं करती, जो चरित्र निर्माण नहीं करती, जो समाज सेवा की भावना विकसित नहीं करती तथा जो शेर जैसा साहस पैदा नहीं कर सकती, ऐसी शिक्षा से क्या लाभ?

अतः स्वामीजी सैद्धान्तिक शिक्षा के पक्ष में नहीं थे, वे व्यावहारिक शिक्षा को व्यक्ति के लिए उपयोगी मानते थे। व्यक्ति की शिक्षा ही उसे भविष्य के लिए तैयार करती है, इसलिए शिक्षा में उन तत्वों का होना आवश्यक है, जो उसके भविष्य के लिए महत्वपूर्ण हो। स्वामी विवेकानन्द के शब्दों में,

तुमको कार्य के सभी क्षेत्रों में व्यावहारिक बनना पड़ेगा। सिद्धान्तों के ढेरों ने सम्पूर्ण देश का विनाश कर दिया है।

स्वामी जी शिक्षा द्वारा लौकिक एवं पारलौकिक दोनों जीवन के लिए तैयार करना चाहते हैं । लौकिक दृष्टि से शिक्षा के सम्बन्ध में उन्होंने कहा है कि 'हमें ऐसी शिक्षा चाहिए, जिससे चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े, बुद्धि का विकास हो और व्यक्ति स्वावलम्बी बने।' पारलौकिक दृष्टि से उन्होंने कहा है कि 'शिक्षा मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।'

www.rajteachers.com

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त निम्नलिखित हैं - १. शिक्षा ऐसी हो जिससे बालक का शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विकास हो सके।

२. शिक्षा ऐसी हो जिससे बालक के चरित्र का निर्माण हो, मन का विकास हो, बुद्धि विकसित हो तथा बालक आत्मनिर्भन बने।

३. बालक एवं बालिकाओं दोनों को समान शिक्षा देनी चाहिए।

४. धार्मिक शिक्षा, पुस्तकों द्वारा न देकर आचरण एवं संस्कारों द्वारा देनी चाहिए।

५. पाठ्यक्रम में लौकिक एवं पारलौकिक दोनों प्रकार के विषयों को स्थान देना चाहिए।

६. शिक्षा, गुरू गृह में प्राप्त की जा सकती है।

७. शिक्षक एवं छात्र का सम्बन्ध अधिक से अधिक निकट का होना चाहिए।

८. सर्वसाधारण में शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार किया जान चाहिये।

९. देश की आर्थिक प्रगति के लिए तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जाय।

१०. मानवीय एवं राष्ट्रीय शिक्षा परिवार से ही शुरू करनी चाहिए।

महत्त्वपूर्ण तिथियाँ

12 जनवरी 1863 -- कलकत्ता में जन्म

1879 -- प्रेसीडेंसी कॉलेज कलकत्ता में प्रवेश

1880 -- जनरल असेम्बली इंस्टीट्यूशन में प्रवेश

नवंबर 1881 -- रामकृष्ण परमहंस से प्रथम भेंट

1882-86 -- रामकृष्ण परमहंस से सम्बद्ध

1884 -- स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण; पिता का स्वर्गवास

1885 -- रामकृष्ण परमहंस की अन्तिम बीमारी

16 अगस्त 1886 -- रामकृष्ण परमहंस का निधन

1886 -- वराहनगर मठ की स्थापना

जनवरी 1887 -- वराह नगर मठ में संन्यास की औपचारिक प्रतिज्ञा

1890-93 -- परिव्राजक के रूप में भारत-भ्रमण

25 दिसम्बर 1892 -- कन्याकुमारी में

13 फ़रवरी 1893 -- प्रथम सार्वजनिक व्याख्यान सिकन्दराबाद में

31 मई 1893 -- मुम्बई से अमरीका रवाना

25 जुलाई 1893 -- वैंकूवर, कनाडा पहुँचे

30 जुलाई 1893 -- शिकागो आगमन

अगस्त 1893 -- हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रो॰ जॉन राइट से भेंट

11 सितम्बर 1893 -- विश्व धर्म सम्मेलन, शिकागो में प्रथम व्याख्यान

27 सितम्बर 1893 -- विश्व धर्म सम्मेलन, शिकागो में अन्तिम व्याख्यान

16 मई 1894 -- हार्वर्ड विश्वविद्यालय में संभाषण

नवंबर 1894 -- न्यूयॉर्क में वेदान्त समिति की स्थापना

जनवरी 1895 -- न्यूयॉर्क में धार्मिक कक्षाओं का संचालन आरम्भ

अगस्त 1895 -- पेरिस में

अक्टूबर 1895 -- लन्दन में व्याख्यान

6 दिसम्बर 1895 -- वापस न्यूयॉर्क

22-25 मार्च 1896 -- फिर लन्दन

मई-जुलाई 1896 -- हार्वर्ड विश्वविद्यालय में व्याख्यान

15 अप्रैल 1896 -- वापस लन्दन

मई-जुलाई 1896 -- लंदन में धार्मिक कक्षाएँ

28 मई 1896 -- ऑक्सफोर्ड में मैक्समूलर से भेंट

30 दिसम्बर 1896 -- नेपाल से भारत की ओर रवाना

15 जनवरी 1897 -- कोलम्बो, श्रीलंका आगमन

जनवरी, 1897 -- रामनाथपुरम् (रामेश्वरम) में जोरदार स्वागत एवं भाषण

6-15 फ़रवरी 1897 -- मद्रास में

19 फ़रवरी 1897 -- कलकत्ता आगमन

1 मई 1897 -- रामकृष्ण मिशन की स्थापना

मई-दिसम्बर 1897 -- उत्तर भारत की यात्रा

जनवरी 1898 -- कलकत्ता वापसी

19 मार्च 1899 -- मायावती में अद्वैत आश्रम की स्थापना

20 जून 1899 -- पश्चिमी देशों की दूसरी यात्रा

31 जुलाई 1899 -- न्यूयॉर्क आगमन

22 फ़रवरी 1900 -- सैन फ्रांसिस्को में वेदान्त समिति की स्थापना

जून 1900 -- न्यूयॉर्क में अन्तिम कक्षा

www.rajteachers.com

26 जुलाई 1900 -- योरोप रवाना

24 अक्टूबर 1900 -- विएना, हंगरी, कुस्तुनतुनिया, ग्रीस, मिस्र आदि देशों की यात्रा

26 नवम्बर 1900 -- भारत रवाना

9 दिसम्बर 1900 -- बेलूर मठ आगमन

10 जनवरी 1901 -- मायावती की यात्रा

मार्च-मई 1901 -- पूर्वी बंगाल और असम की तीर्थयात्रा

जनवरी-फरवरी 1902 -- बोध गया और वाराणसी की यात्रा

मार्च 1902 -- बेलूर मठ में वापसी

4 जुलाई 1902 – महासमाधि

---

www.rajteachers.com